© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 04 , Issue : 08 | October - December 2017

मानव जीवन में भक्ति का महत्व

[1]जितेन्दर , [2]सहायक प्रोफेसर जयपाल राजपूत,
शोध छात्रा एम0 ए0 योग, (योग विभाग) , चौधरी रणवीर सिहं विश्वविद्यालय (जीन्द)

भूमिकाः—

ISSN : 2348-5612 © URR

भक्ति को लोग अराधना के रूप में मानते है। यह सत्य है। लेकिन यह अराधना के अतिरिक्त एक जीवन शैली भी है। मनोविज्ञान भी हैं, जिसके द्वारा हमअपने जीवन की तामसिक अवस्थाओं से मुक्त होकर, सात्विक अवस्था में स्थिर होकर आत्मा— प्रमात्मा के सम्बन्धों का अनुभव कर सकते है। यही भक्ति की कहानी है।

लोग मानते हैं कि भक्ति एक साधना है, लेकिन वास्तव में "भक्ति" एक जीवन शैली हैं, जीवन जीने की एक कला है।

इस संसार में ज्ञानियों द्वारा दो प्रकार की भक्ति बताई गई है। परा—भक्ति और अपरा भक्ति, जो भक्ति ईशवर के प्रति अपना प्रेम सम्बन्ध स्थापित करती है, यह आध्यात्मिक भक्ति है। जो कामनाओं और सांसारिक सुखों के लिए की जाती है, वह अपरा—भक्ति कहलाती है।

"धर्मामृत यथोक्त जो, नित निष्कामहि सेव।

भक्त श्रेष्ट दयालु सो, अति प्रिय मोहि कौन्तेय।। —1

भक्ति की परिभाषा— सेवा और प्रेमः— संस्कृत के भज्सेवायाम् धातु से भक्ति शब्द की उत्पति होती है। जब भज् धातु में क्तिन् प्रत्यय लगता है, तो भक्ति शब्द का निर्माण होता है। क्तिन् का अर्थ होता है प्रेम और मूल भज् द्यात् का अर्थ है सेवा। जहां पर मनुष्य दुसरे से जुड़े और जहां पर प्रेम हो, हीं भक्ति है। यह हमारे शास्त्रों का वचन है। ईशवर की आराधना को, ईशवर के चिन्तन को मंत्र—जप को भक्ति नहीं कहां गया, बल्कि भक्ति का साधन माना गया ह। चिन्तन मनन् मात्र एक साधन है।

भक्ति की परिभाषा है जीवन का व्यवहार, जिसमें तुम अपने भीतर प्रेम का अनुभव करते हो, जिससे दुसरों को सुख मिलता है। "भज् सेवायाम् धातु और कितन् प्रत्यय्", अर्थात सेवा और प्रेम— जीवन के यही दो व्यवहार भक्ति के प्रतीक माने गये है। —2

अर्थः—

ईशवर के प्रति परम प्रेम को भक्ति कहते है। —3

भक्ति एक साधना हैं जीवन शैली हैं, जीवन जीने की कला है। —4

"सब इन्द्रिन को रोकिकै, करि हरि चरणन ध्यान। बुद्धि रहै सुरतिहु रहै, तौ समाधि मत मान्" ।। श्लोक सं0—1

"ध्यायाता बिखरैध्यान में, ध्यान होय लय ध्येय। बुद्धि लीन सुरति न रहे, पद् समाधि लखिलेय।।—5, 2

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 04 , Issue : 08 | October - December 2017

अपने ह्रदय में परम आहलाद सहित भक्ति योग के द्वारा ईष्ठदेव के स्वरूप का चिंतर करना चाहिए। इससे आान्नद के आंसू बहने लगते है। शरीर पुलकाय मान होता है तथा मन में अचैतन्य और सकाग्रता आकर ब्रहने से साक्षात्कार होता, यह भक्ति योग समाधि कहलाती है। – 6

सच्चे और निष्कपट भाव से ईशवर की खोज करना ही भक्ति कहलाती है। –7

"सा तस्मिन परमप्रेम रूपा" अर्थात भगवान के पति उत्कृट प्रेम ही भक्ति है। –8

वह (भक्ति) ईशवर के प्रति परम प्रेम रूपा है। –9

वह (भक्ति) ईशवर के प्रति परम अनुरागरूपा ह। {इसे ही परा भक्ति कहा गया है।} -10

देवर्षि नारद के मत में अपने सब कर्मो को भगवान के अपर्ण करना और भगवान का थोड़ा सा भी विस्मरण होने में परम व्याकुल होना ही भक्ति है। –11

हे ईश्वर! अज्ञानी जनों की जैसी प्रति इन्द्रियों के नाशवान, क्षण भंगुर, योग्य पदार्थों के प्रति रहती है। वैसी ही प्रीति मेरी तुममें हो और हे भगवान ! तेरी सत्त कामना करते हुए, मेरे ह्रदय से वह कभी भी दूर न हो। – 12

यह प्रेम रूपा भक्ति एक होकर भी ग्यारह प्रकार की बतलाई गई है।

1– गुणमाहात्म्या शक्ति 2– रूपा शक्ति 3– पूजा शक्ति 4– स्मरण शक्ति 5– दास्याशक्ति 6– सख्या शक्ति 7– कान्ता शक्ति 8– वात्सल्या शक्ति 9– आत्मनिवेदना शक्ति 10– तन्मयता शक्ति 11– परमविराह शक्ति। – 13

हेया रागत्वादिति चेन्नो तमास्पदत्वात् सङ्ग्वत्।

यदि भक्ति राग रूपा है तो योगशास्त्रोक्त पांच क्लेशों में परिगणित "राग" में तथा इसमें कोई अन्तर नहीं है। ऐसी दशा में मुमुक्षु के लिए यह रागस्वरूपा भक्ति भी त्वाजय ही होगी। ऐसा कहे तो ठीक नहीं, क्योकि इस राग का आश्रय उतम हैं, ईश्वरविष्यक राग को भक्ति कहते है। अतः वह त्याज्य नहीं है। विषय राग ही त्याज्य है। –14

आचार्य बादरायणः (वेदव्यास) केवल चिदधन आत्मा का आश्रय लेने वाली बुद्धि को ही मोक्षदायिनी मानते है। {इनके मत में एक मात्र विशुद्ध चित्सता ही परमार्थ वस्तु है, परमात्मा और जीवात्मा का भेद कल्पित है। वास्विक नहीं।}-15-

सम्मान बहुमान प्रति विरहेत रविचिकित्सामहिम ख्यातितदयर्थ प्राण– स्थान तदीयता सर्वतद् भावा– प्रति कुल्यादीनि चस्मरणेभयो बाहुल्यात्।। 44 ।।

अर्जुन की भांति भगवान् के प्रति सम्मान की बृद्धि, इक्ष्वाकु की भांति भवत्सदृश नाम या वर्ण के प्रति अधिक आदर(उसके दर्शन से भगवत्प्रेमका उदय होना), विदुर की भांति भगवान या भगवतदक्त के दर्शन से प्रीति गोपी जनों की भांति भगवान् के विरह की अनुभूति उपमन्यु तथा श्रेटद्वीप वासियों के समान भगवम्दिन्न वस्तुओं से स्वभावतः अरूचि होना, भीष्म एवं व्यास आदि की तरह निरन्तर भगवान् की महिमा का वर्णिन, व्रजवासिायों तथा हनुमान जी की भांति भगवान् के लिए जीवन धारण करना, बाली आदि की भांति मैं तथा मेरा सब कुछ भगवान् का ही है।, यह भाव रखना, प्रहलाद जी की तरह सब में भगवनदाव होना, भीष्म, युघिष्ठर आदि की भांति कभी भगवान् के प्रतिकूल आचारण न करना आदि बहुत से भक्ति सूचक चिन्ह समृतियों (इतिहास पुराणों के वर्णन) से भी प्रायः लक्षित होते है। –16

"यत्प्राप्य न किण्व्दिाञछति, न शोचाति।

न्द्वोष्तिन रमते, नौत्साही भवति ।। 5।।

जिसके (प्रेस्वरूपा भक्ति के) प्राप्त होने पर मनुष्य न किसी वस्तु की इच्छा करता है, न शोक करता है, न किसी वस्तु में आसकत होता है।, और न उसे (विषय– भोगों की प्राप्ति में) उत्साह होता है। –17–

पराशरनन्दन श्री व्यास जी के मतानुसार भगवान् की पूजा आदि में अनुराग होना भक्ति है। – 18

शाण्डिल्य ऋषि के मत में आम्मरति के अविरोधी विषय में अनुराग होना ही भक्ति है। –19

अर्जुन उवाचः'– "एक भगत अनुरक्त हवै दुजो निर्गुण बह्रम"। कवन उपासक श्रेष्ठ इन मोहिं कहिय

गोविन्द।। –

श्रीभगवान उवाचः– धर्मामृत यथोक्त जे, नित निष्कामहि सेब।

भक्तश्रेष्ठ दयालु सो, अति प्रिय मोहि कोन्तेय।। –20

भक्ति और भगवान

– लोग मानते हैं कि भक्ति एक साधना हैं, लेकिन वास्तव में भक्ति एक जीवन शैली हैं, जीवन जीने की एक कला है, और कुछ नहीं।

भक्ति की कहानी :– भक्ति को लोग आराधना के रूप में मानते है। यह सत्य हैं। लेकिन यह आराधना के अतिरिक्त एक जीवन शैली भी है।, मनोविज्ञान भी है। जिसके द्वारा हम अपने जीवन की तापसिक अवस्थाओं से मुक्त होकर सात्विक अवस्था में स्थिर होकर आत्मा परमात्मा की कहानी है।

ईश्वर का स्थान– प्रत्येक मनुष्य के भीतर ईश्वर का वास ह्रदय में होता है। जिससे चैतन्य ज्योति कहते है।

ईश्वर के पांच कर्म– 1– सृष्टि – सृष्टि की रचना करना पहला कर्म,

2– पालन– सृष्टि की रचना के पश्चात् उसका पालन करना दुसरा कर्म

3–परिवर्तन– सृष्टि की रचना और उसके पश्चात् पालन करना और फिर उसमें परिवर्तन करना भी महत्वपूर्ण अंग है।

4–तिरोभाव (तिरोधान)'– अविद्या का अवरण उस ज्ञान के प्रकाश को ढंक देता है। वह है माया का आवरण । यह ईशवर का चौथा कर्म है। –

5– अनुग्रेह या कृपा– व्यक्ति को पुनः उत्थान के मार्ग पर ले आना तिरोभाव में माया है और अनुगेह में भक्ति। –21–

ईश्वर के छः गुण –1– ज्ञान – परमात्मा सभी का साक्षी होता है, सभी को देखता हैं परमात्मा भी प्रकृति की सभी कृतियों को द्रष्ता भव से देखता रहता हैं और द्रष्ता होने के कारण उसमें ज्ञान है। ज्ञान ईश्वर का पहला गुण है।

2. ऐश्वर्यो– समस्त ब्रहमाण्ड में जो भी एश्वर्य या विभूति मनुष्य प्राप्त करता है, वह सब ईश्वर की ही देन है।

3. वैराग्य :– ईश्वर किसी भी आसक्त नहीं है, ईश्वर किसी को न कम चाहता है, न ज्यादा वह तो सभी मनष्य को समान रूप से प्रेम करता है।

4. बल और सामर्थ्य :– वह सब कुछ करने में सक्षम है। संसार में कुछ भी ऐसा नहीं जो वह नहीं कर सके।

5. अरि (सम्पति या धन)– जिसके द्वारा मनुष्य अपने जीवन के अभावों से मुक्त हो जाता है।

6. यश (किर्ति) वह यश और कीर्ति भी है, जिससे ह्रदय में आन्नद की लहर दौड़ जाती है।

ईश्वर का निवास स्थान– ईश्वर का वास सभी जीवों के ह्रदय में होता है। जहां वह ज्योति रूप में रहता है।

भगवान का साकार और निराकार सवरूप – सम्पूर्ण जगत् भी उसी परमेश्वर में समाहित रहता है, वह उस परमत्तव का निराकार रूप है।

आराधना के लिए ईश्वर के दोप्रतीक होते है।

1. साकार
2. निराकर

गीता में कहा गया है कि चार प्रकार के भक्त होते हैं :–

1. आर्त
2. अर्थार्थी
3. जिज्ञासु
4. ज्ञानी

1– ज्ञानी निराकार रूप को ज्ञानी जान सकते है।

2– जिज्ञासु– समझने का प्रयत्न कर सकते है।

3– आर्त– जो आर्त है, जो जीवन से दुःखी है, जो जीवन में सहारे की खोज करता है, जो जीवन के अभावों को दुर करने का प्रयास करता है।

4– अर्थार्थी– जो किसी विशेष प्रयोजन की सिद्धी हेतु उपासना करता है, वह हमेशा साकार की ही उपासना करेगा।

इस प्रकार निराकार का अनुभव करने, निराकार के अस्तित्व को जानने का प्रयास जिज्ञासु तथा ज्ञानी करते है। जबकि आर्त और अर्थार्थी साकार की उपासना करते है।

भगवान क्या करते है।– बीरबल ने कहा जहां पनाह जो उंचा रहता है, उसको भगवान नीचे ले आते हैं और जो नीचे रहता है उसको भगवान उपर कर देते है। यही भगवान का काम है।, ईश्वर कभी किसी चीज को स्थाई रूप नहीं देते। सतत् परिवर्तन ही ईश्वर का काम है।

भगवान क्या खाते हैं :– ईश्वर मनुष्य के अंहकार को खाते हैं । जब तक मनुष्य के मन में अंहकार है,वह ईश्वर के पास नहीं जा पाएगा। भक्ति में लीन मनुष्य ही भगवान की अनुभूति कर सकता है। इसलिए भगवान मनुष्य के अंहकार का भक्षण करते है।

भगवान अवतार क्यों लेते है :– अवतार आखिर क्यों होता है। गीता में कहा गया है कि अवतार धर्म की स्थापना और दुष्टों का विनाश करने के लिए साधुओं को आनदिंत करने के लिए होता है।–

3. भक्ति में प्रतिमा या प्रतीक की आवश्यकता– उसी प्रकार जब एक भक्त प्रतिमा की आराधना करता है, तोवह उस प्रतिमा में अपने आराध्य को, अपने ईश्वर को देखता है। प्रतीमा एक प्रतीक मात्र है, और कुछ नहीं। एक साधक के लिए एक भक्त के लिए प्रतिमा आवश्यक है।। उसी के द्वारा वह ईश्वर के प्रति श्रद्धा, विश्वास और प्रेम की भावना व्यक्त कर पाऐगा। –22–

भक्ति की परिभाषा – सेवा और प्रेम– संस्कृत के भज् सेवायाम् धातु से भक्ति शब्द की उत्पति होती है। जब भज् धातु में क्तिन् प्रत्यय लगता है, तो भक्ति शब्द का निमार्ण होता है। क्तिन का अर्थ होता है प्रेम और मूल भज् धतु का अर्थ है सेवा। जहा पर मनुष्य दुसरे से जुड़े और जहा पर प्रेम हो वही भक्ति है। यह हमारे शास्त्रों का वचन है।ईश्वर की आराधना को, ईश्वर के चिन्तन को, मंत्र–जप को भक्ति नहीं कहां गया, बल्कि भक्ति का साधन माना गया । चिन्तन मनन मात्र एक साधन है।

भक्ति की परिभाषा हैं जीवन का व्यवहार, जिसमें तुम अपने भीतर प्रेम का अनुभव करते हो, जिससे दुसरों को सुख मिलता है। "भज् सेवायाम् धातु और कितन् प्रत्यय," अर्थात सेवा और प्रेम– जीवन के यही दो व्यवहार भक्ति के प्रतीक माने गये है।। –23–

ईशवर के प्रति परम प्रेम को परम अनुराग को भक्ति कहते हैं। श्रवण के द्वारा तुम वो जान पाते हो, दर्शन के द्वारा तुम जो देख पाते हो, और मनन् के द्वारा तुम जिसका चिन्तन कर पाते हो, अगर मन उसके एकाकार हो जाए तब प्रेम की भावना जागृत होती है। यह मनुष्य के जीवन में भक्ति की शुरूआत है।

भक्ति के रूप 1– परा भक्ति। 2– अपरा भक्ति

1– परा भक्ति– जो भक्ति ईश्वर तथा भक्त के बीच सम्बन्ध स्थापित करती है, उसे परा भक्ति कहते है। परा भक्ति आध्याम्कि है।

2– अपरा भक्ति– जो विषयों, कामनाओं या परिस्थितियों से प्रभावित होती है, उसको अपरा भक्ति कहते है। अपरा भक्ति सांसारिक है।, अपरा भक्ति में मनुष्य अपने सुख के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है।

1– परा भक्ति में भक्त इस नश्वर शरीर में अनश्वर आत्मा की जानने का, उसका अनुभव प्राप्त करने का प्रयास करता है।

भक्ति में पांच बाधाएं 1– जाति अभिमान्, 2– विद्या अभिमान 3– पद अभिमान 4– सोन्दर्य अभिमान 5– योवन अभिमान

1 – जाति अभिमान्– पहली बाधा है जाति अभिमान! हम ब्रहामण है। क्षत्रिय है।, शुर्द्र है।, वैश्य हें भिन्न–भिन्न सम्बन्धों को हम अपने से जोड़ते है और उस रूप में स्वंय को देखते है। जो भक्ति में बाधक है।

2 विद्या अभिमान् – दुसरी बाधा विद्या अभिमान् मैं डिग्री धारी हूं। मैने इतनी किताबें लिखी हें मैं इतने दर्शनों का ज्ञाता हूं। यह विद्या का अभिमान है।

3 पद अभिमान– जो पद पर है। वह अकड़ जाता है, दुसरों के सामने झुकता नही है। अगर कंगालराजा बन जाए तो अकड कर चलेगा। एक गरीब अगर धनवान होजाए तो अंहकारी हो जाता है। यह है पद का अभिमान।

4 सौन्दर्य अभिमान– चौथी बाधा सौन्दर्य का अभिमान है । जो यह मान लेता है कि मैं तो सौन्दर्य से युक्त हुं। मैं अपने वश में सब कुछ कर सकता हूं। तोयह उस भक्त कीबहुत बड़ी भूल होगी।

5 यौवन अभिमान– जैसे–जैसे चालीस की उम्र पार होती है, यौवन का अभिमान स्वतः घटता जाता है।

भक्ति के पांच शत्रु – 1–काम वासना 2– क्रोध, 3– लोभ 4– भ्रम 5– लौकिक प्रेम।

1– काम वासना – आदमी काम– वासना में इतना अन्धा हो जाता है कि सही– गलत को पहचान नहीं पाता! इसलिए काम को भक्ति का प्रथम शत्रु माना है। ब्रहमचर्य के पालन से इस शत्रु को भगाया जा सकता है।

2–क्रोध– भक्ति का दुसरा शत्रु है क्रोध । क्रोध आ जाए तो भक्ति सिद्ध नहींहोती और क्रोध का समाधान होता है क्षमा करना।

3– लोभ– लोभी वयक्ति भक्ति को सिद्ध नहीं रक सकता । लोभ का निवारण होता है। विरक्ति केद्वारा कर्तव्य प्रायणता ही विरक्ति की भावना को लाती है। इसलिए लोभ रूपी शत्रु का निवारण विरक्ति की भावना से होना है।

4–भम्र– इसका निवारण होता है चिन्तन के द्वारा बहुत लोग सोच में पड़ जाते हैं कि क्या करना है क्या नहीं करना है कि से पुछें, किससे नहीं पुछें, भ्रमित हो जाते हैं चिन्तन द्वारा उस भ्रम से मुक्ति पा सकते हें ज्ञान के अभाव में अनुभव के अभाव में भ्रम उत्पन्न होता है।

5– लौकिक प्रेम– दैविक प्रेम के द्वारा हम लौकिक प्रेम पर विजय पा सकते हैं जो भक्त की भक्ति में बाधक है। –24–

"चतुर्विद्या भजन्ते मां जना सुकृतिनोअर्जन।

अर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।। –25–

अर्थात हे भरतवंसियों मेंश्रेष्ठ अर्जुन उतमकर्म करने वाले अर्थार्थी, आर्त जिज्ञासु और ज्ञानी ऐसे चार प्रकार क भक्तजन मुझको भजते है।।

"अति चेत्सुदुराचारोंभजते मामनन्यभाक्।

साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्यत्यवसितो हि सः।। –26–

अर्थात यदि कोई अतिशय दुराचारी भी अनन्य भाव से मेरा भक्त होकर मुझको भजता है तो वह साधु ही मानने योग्य है। क्योंकि वह यथार्थ निश्चयवाला है। अर्थाथ उसने भली भांति निश्चय कर लिया है कि प्रेमश्वर के भजने के समान् अन्य कुछ भी नहीं है।

गीता में चार प्रकार के भक्त बताएं है।

1– आर्त – द्रोपदी तथा गजेन्द्र जैसे पिड़ित भक्त ।

2– जिज्ञासु जैसे उद्दव।

3– अर्थार्थी – जो किसीकामना से भक्ति करता है जैसे – ध्रुव।

4– ज्ञानी– शुकदेव जैसे ज्ञानी।

"ददामि बुद्धियांग तं येन मामुपयांति ते।"

मैं उसे बुद्धियोग प्रदान करता हूं जिससे वह मुझे प्राप्त कर लेता है। –27–

अर्थ– अपने ह्रदय में परम आहल्द सहितभक्तियोग के द्वारा इष्टदेव के स्वरूप का चिन्तन करना चाहिए। इससे आनन्द के आसु बहन लगते है। शरीर पुलकायमान होता है। तथा मन में अचैतन्य और एकाग्रता आकर ब्रहम से साक्षात्कार होता है। यह भक्ति योग समाधि कहलाती है। ।। –28–

महर्षि घेरण्ड़ कहते है। किअपने ह्रदय में ईष्ट देव के सवरूप पर ध्यान लगाना है और चिंतन के द्वारा इष्टदेव के लिए पूर्ण श्रद्धा , भक्ति, प्रेम और आन्नद मिश्रित समर्पण का भाव उत्पन करना है। जब इष्टदेव ध्यान लग जाता है तब आनन्द के आंसू बहने लगते हैं और आनन्नदातिरेक के परिणम स्वरूप शरीर कांपने लगता है। इस तन्मय अवस्था को प्राप्त कर साधक अपने इष्ट में लय हो जाता है। इस प्रकार उसे भक्ति योग समाधि की प्राप्ती होती है। जो भावुक या कोमल ह्रदय वाले व्यक्ति है। उनके लिए भक्ति योग सर्वोतम है। –29–

1 भक्ति क्या हैं– ईश्वर के प्रति परम प्रेम को भक्ति कहते है।
2 भक्ति के दो प्रकार –1–काम्य 2– विष्काम्य
3 निष्काम्य भक्ति दो प्रकार की होती है:– 1–वैद्यी बाहय पूजा, जप आदि। 2 रागात्मिका अथवा प्रेम – ईश्वर के पति असीम प्रेम ।
4 पांच प्रकार की मुक्ति

1 सालोक्य – भगवान के ही लोक में वास।
2 सामीप्य– भगवान के समीप वास।
3 सारूप्य – भगवान के सदृश रूप।
4 सायुज्य भगवान के साथ पूर्ण तादात्म्य।
5 सार्ष्टि– ईश्वरीय शक्तियों का उपभोग।

पांच प्रकार के भाव–

1 शांत– भीष्म जैस संयमित तथा शान्त।
2 दास्य– सेवा स्वामी भाव जैसे हनुमान।
3 सख्य– अर्जुन जैसा मित्र भाव
4 माद्युर्य– पति– पत्नी भाव, प्रेमी–प्रेमिका भाव जैसे गोपी– गौरांग।
5 भक्ति भाव'– मीरा जैसा भक्ति भाव।

भक्ति के विकास के छः साधन–

1 भागवत् साधु तथा सन्यासी कीसेवा।
2 भगवान के नामका जप, स्मरण आदि।

3 सत्संग।
4 हरि कीर्तन।
5 गीता– रामायण– भागवत आदि का स्वाध्याय।
6 तीर्थ– यात्रा तथा वृन्दावन, अयोध्या, पण्ढरपुर, चित्रकुट इत्यादि पवित्र स्थलों में निवास।

भक्ति के आठ लक्ष्ण–

1.अश्रुयात 2. पुलक 3. कम्पन 4. रोदन 5. हास्य 6. स्वेद 7. मुर्च्छा 8. स्वरभंग

भक्त के चार गुण–

1. तृण के समान नम्र।

2. वृक्ष के समान सहिष्णु।

3. स्वंय मान अथवा आदर कीकामना न रख दुसरों को आदर देना।

4. सदा भगवान के नाम का जप।

भक्ति मार्ग के पांच कण्टक (अभिमान)

1. जाति 2. विद्वता 3. पद 4. सौन्दर्य 5. यौवन

भक्ति मार्क के दो आन्तरिक शत्रु–

1. काम 2. क्रोध

भक्ति के तीन आपत्तिजनक –

1. स्त्री 2. धन 3. नास्तिक व्यक्ति

भक्ति के पूर्वापेक्ष्य :–

1	निष्काम्य	(फल की कामना न रखना)
2	अनन्य	(ईश्वर के पति पूर्ण प्रेम)
3	अखण्ड	(तैलधारावत् प्रेम)
4	सदाचार सहित	(शुभ गुण तथा चरित्र के साथ)
5	अव्यभिचारिणी	(इष्टदेवता के प्रति गम्भीर प्रेम)
6	हार्दिक सच्चाई।	

दो प्रकार की पूजा (अर्चना) – (भक्ति)

1 बाध्य 2 मानसिक
पूजा में चार प्रकार के भाव–

1 ब्रहम भाव (जीवात्मा तथा प्रमात्मा एक है।)
2 ध्यान भाव (योगाभ्यास के साथ सतत अध्ययन)।
3 स्तुति भाव (जप तथा पूजा स्तोत्र)।
4 बाहय भाव (बाहय पूजा)

(भक्ति) पूजा के सोलह अंग –

1. आसन (इष्टदेवता की मूर्ति के लिए आसन देना)।
2. स्वागत् (इष्टदेवता का स्वागत करना)।
3. पाद्य (चरण धोने के लिए जल)
4. अर्ध्य (कलश में जलका अर्पण)।
5. आचमन।
6. मधुपर्क (मधु, घी, दुध तथा दही)।
7. स्नान (स्नान के लिए जल)।
8. वस्त्र।
9. भूषण
10. गन्ध।
11. पुष्प।
12. धुप।
13. दीप।
14. नैवेद्य।
15. ताम्बूल।
16. वन्दन अथवा नमस्कार।

भक्ति ह्रदय की वह पवित्र भावना है जो भक्त का भगवन से संबन्ध कराती है।

भक्ति सारे धार्मिक जीवन का आधार है। भक्ति वासनाओं तथा स्वाभिमान को विनष्ट करती है। भक्ति श्रद्धा तथा प्रेम के बिना जीवन निस्सार है। भक्ति ह्रदय कोकोमलबनात है तथा ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, अभिमान तथा धृष्टता को दूर करती है। यह आन्नद दिव्य भाव, सुख – शन्ति तथा ज्ञान का संचार करती है। सब प्रकार के शोक, चिन्ता, दुख, भय, मानसिक व्याधि तथा क्लेश पूर्णतः विलुप्त हो जाती है। भक्त जन्म–मृत्यु के चक्र से विमुक्त हो जाता है। वह सुख – शन्ति तथा ज्ञान से शाष्श्रत धाम को प्राप्त कर लेता है।

भक्ति श्रद्धा तथा सतत् नाम– स्मरण से निश्चय ही इसका अनुभव किया जा सकता है।

जिस तरह जलाने का गुण अग्नि में सहज रूप से विद्यमान रहता है। उसी तरह ईश्वर के नाम में पापों को मूलतः जलाने तथा ईश्वर की भाव – समाधि देने का स्वाभाविक गुण है।

भक्ति में चारप्रकार की ध्वनि–

1 परा (प्राण मे अभिव्यक्त)।
2 पश्यन्ती (मन में अभिव्यक्त)
3 मध्यमा (इन्द्रियों में अभिव्यक्त)
4 वैखरी (व्यक्त वाणी)

भक्ति में तीन प्रकार के जप–

1 वैखरी– जिहवा से कर्ण गोचर।
2 उपांशु– जिहवा से ध्वनी रहित।
3 मानसिक– मन में।

भक्ति में तीन प्रकार के कीर्तन–

1 एकान्त (अकेले)।
2 संकीर्तन (बहुत व्यक्तियोंके साथ)
3 अखण्ड कीर्तन (लगातार कीर्तन)।

ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 04 , Issue : 08 | October - December 2017

भक्ति में नौ भूमिकांए–

1 सत्संग (स्वाध्याय) 2 स्तुति (भगवान की) 3 श्रद्धा –(ईश्वर में) 4 भक्ति (साधना भक्ति या जप कीर्तन आदि) 5 निष्ठा। 6 रूचि (भगवान के नाम तथा महिमा के श्रवण तथा जप मे) 7 रति (अत्यधिक आशक्ति) 8 स्थायी–भाव (भक्ति रस में स्थिरता का भाव) 9 महाभाव (भक्त जगत् तथा उसके आर्कषण से मुक्त हो जाता है।) –30–

निष्कर्सः–

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भक्ति योग सभी योगों में श्रेष्ठ सुगम एवं सरल है। इसे कोई भी या किसी भी सतर पर व्यक्ति बच्चा, व्यस्क, वृद्ध अशिक्षित अज्ञानी भी कर सकता है। इसमें किसी विशेष परिश्रम की आवश्यकता नहीं पड़ती । भगवान के प्रति सम्पूर्ण सर्मपण ही भक्ति योग की अन्तिम स्थिती होती है। निष्काम भक्ति ही श्रेष्ठ भक्ति मानी जाती है। भारतीय भूमि पर अनेक महान पुरूष भक्ति योग की साधना करके अमरतता को प्राप्त हुए है।, जैसे राम कृष्ण परमहंस, मीरा, चैतन्य, प्रहलाद, वेद ब्यास, कबीर, रामानन्द, सबरी आदि, भक्तियोग एक ऐसा मार्ग है। जिस पर चलकर सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति भी परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। यह रतना उच्च कोटि का मार्ग है। कि जब साधक अपने ईष्ट के प्रति पूर्णत्या समर्पित हो जाता है तो वह सांसरिक दुखों को भगवान का दिया प्रसाद समझ कर सन्तोष करता हुआ आन्नद में मग्न रहता है।

सभी भक्तों और ज्ञानियों ने "भक्ति" को अपने– अपने मतो के अनुसार बतलाते हुए भक्ति का वर्ण किया है। परन्तु सभी का लक्ष्य एक ही है। "अपने इष्ट देव में विलिन होना"।।

हम आद्युनिक जीवन मेंइतने व्यस्तहोगये हैं कि अपने आराध्य को याद हीनहीं करते भौतिक वाद में जीने लगे है। तभी हमारे समाज में लोगें की सोच तामसिक पृवर्ति की होती जा रही है। यदि हमअपने धार्मिक ग्रन्थ, उपनिष्द, वेद, पुराण, गीता, रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों का अध्ययन करें तो हमें अपनीआने वाली पीढ़ी को इनसे साक्षात करवा सकते है। ताकि हमारी "भारतीय सभ्यता" को आगे बढाया जा सके। दिन प्रतिदिन होने वाले अपराधों – अत्याचारों दुष्कर्मों को अपने समाज से ही नहीं बल्कि पूरे विश्व– ब्रहमाण्ड में "भक्ति" का संदेश देकर मानव जाति को खण्डित होने से बचाया जा सकता है। क्योंकि भक्ति प्रेम ही ऐसा पथ हैं जिस पर चलकर हम पुरे विश्व को एक सुत्र मे ंबांध सकते है।

इस संसार में बहुत सारे उच्च कोटी के भक्त हुए है। हमने सभी भक्त के मतों का अध्ययन किया ओर यह जाना कि भक्ति के माध्यम से मनुष्य अपने इष्ट देव कीआराधना करता है और उससे साक्षात्कार कर लेता है। (भक्ति) एक ऐसा सच्चा रास्ता है। जिससे भक्त के मन मेंउठने वाले लोभ, मोह, काम वासना शान्त होकर उसे मोक्ष की प्राप्ती करवाती है।

इस (भक्ति) केरास्ते पर चलने के लिए जरूरी नहीं की भक्त ज्ञानी ही हो, एक अनपढ मनुष्य भी इस रास्ते का पालन करते हुए, अपनी मंजिल पा लेता है। वह भी उच्च कोटि का भक्त होकर, इस संसार में मोक्ष प्राप्त कर लेता है। अतः हम कह सकते है। कि भक्ति का रास्ता उतम रास्ता है। जिसे हर प्राणी को अपनाना चाहिए।

संदर्भ सूचीः–

1– गीता मानस अपरोक्षा अनुभूति– स्वामी ओंकारानन्द सरस्वती पृष्ठ सं0– 37

2– भक्ति साधना स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती प्रष्ठ सं0– 28

3– साधना– श्रीस्वामी शिवानन्द सरस्वती

4 भक्ति साधना– स्वामी रंजानन्द सरस्वती

5– भक्ति सागर ग्रन्थ– श्री स्वामी चरणदास जी

6– घेरण्ड संहिता– स्वामी निरंजना सरस्वती

7– योग महाविज्ञान – स्वामी विवेकानन्द

8– योग महाविज्ञान – नारद मुनी

9– नारद भक्ति सुत्र

10– शांण्डिल्य भक्ति सूत्र

11– नारद भक्ति सूत्र

12– भक्त प्रहलाद– योग महाविज्ञान

13– नारद भक्ति सुत्र – प्रथम अध्याय

14– नारद भक्ति सुत्र प्रथम अध्याय

15– शाण्डिल्य भक्ति सुत्र द्वितिय अध्याय

16– शाण्डिल्य भक्ति सूत्र– द्वितीय अध्याय

17– नारद भक्ति सूत्र

18– नारद भक्ति सूत्र

19– शाण्डिल्य –भक्ति सुत्र

20– गीता मानस अपरोक्षा अनुभूति – लेखक– ओकारानन्द सरस्वती

21– भक्ति साधना– लेखक – स्वामी निरन्जनानन्द सरस्वती

22– भक्ति साधना लेखक – स्वामी निरन्जनानन्द सरस्वती

23– भक्ति साधना लेखक – स्वामी निरन्जनानन्द सरस्वती

24– भक्ति साधना लेखक – स्वामी निरन्जनानन्द सरस्वती

25– श्रीमद्भगवद् गीता–

26– श्रीमद् भगवद् गीता–

27– श्रीमर्दभगवद् गीता–

28– घेरण्ड़ संहिंता– लेखक – स्वामी निरन्जनानन्द सरस्वती

29– घेरण्ड़ संहिता– लेखक – स्वामी निरन्जनानन्द सरस्वती

30– साधना लेखक – स्वामी शिवानन्द सरस्वती अध्याय–14